Volume-9, No. 2 Aug.-2022, pp. Hin.24-27

# अस्तित्ववाद के मौलिक विचारों की शैक्षिक प्रासंगिकता

**डा.संजय कुमार त्यागी,** प्राचार्य
विवेक कालेज, बिजनौर उत्तर–प्रदेश भारत।

**सारांश**
विचार सतत प्रकिया है, जिसकी अनवरत श्रंखला हमारा दृष्टिकोण बनाती है परिणामस्वरूप घटनाओं और संबंधो को व्याख्या देने का एक सुनिश्चित ढंग बन जाता है यही दर्शन है पाश्चात्य दर्शन के विकास क्रम में अस्तित्ववाद अपेक्षित रूप में नवागन्तुक ही है। द्वितीय विश्व युद्ध की विभीषिका से उत्पन्न कराह को पश्चिम के कला जगत ने अपने हृदय मे अनुभव किया। कविता कहानी, मूर्ति, शिल्प, नाटक, उपन्यास और रंगमंचो से मानव की व्यैक्तिकता तथा जीवन की नैसर्गिकता मुखर हो उठी। आधुनिक विज्ञान और तकनीकी की विध्वंसक मार से तिलमिलाए विश्व ने मानव गरिमा, उसके निजित्व और अस्तित्व को नवीन दृष्टि से निहारा। यांत्रिकरण, धार्मिक वर्जनाओं, सामाजिक बंधनो, धार्मिक दबाब और अलगाव को अस्वीकार कर मानवीय संवेदनाओ और बौद्धिक स्वतंत्रता को स्वीकृत किया गया। यह विचार श्रंखला साहित्य, रंगमंच और बौद्धिक जगत से परिष्कृत हो सामाजिक और शैक्षिक जीवन में वृहद रूप में आत्मसात की गई।

**मुख्यशब्दः** अस्तित्व, स्व तथ्य तथा सभ्भाव्यता, तात्विक सत्य, मुक्त सभ्यता, नवीन दासत्व।

मानव अन्तःकरण की जिज्ञासा एवं अज्ञात के प्रति संव्याप्त संदेह की संतृप्ति का प्रयास ही दर्शन है। ज्ञान पिपासा की शान्ति और प्रणोद संतुलन की चाह जिस वृहद विचारशास्त्र को जन्म देती है वह दर्शनशास्त्र है। स्पष्टत सम्पूर्ण पाश्चात्य दर्शन का वैचारिक पोषण प्राचीन यूनानी दर्शन के तत्वों से ही हुआ है। यूरो–अमेरिकी दर्शन की आधारशिलाएं आदर्शवाद, प्रकृतिवाद, यथार्थवाद, प्रयोजनवाद मानववाद और अस्तित्ववाद की विचारधाराओं से बनी है। आदर्शवाद विचार का दर्शन है। प्रकृतिवाद इंद्रिय संज्ञान और उसका परीक्षण कर सकने की यन्त्रवादी विचारधारा है। यथार्थवाद सत्ता के अनुभव का अध्ययन है। प्रयोजन, परिवर्तनशील जगत से तारतम्यता और सामाजिक सामंजस्य पर बल देता है। मानववाद मानव की साधन सम्पन्नता और सुख का दर्शन है। इन्हीं वैचारिक सिद्धान्तों पर चलकर पश्चिमी जगत ने अतिशय भौतिक प्रगति की है। विश्व में विज्ञान, प्रौद्योगिकी, यातायात, संचार, व्यापार, खेल, मनोरंजन और शिक्षा के संसाधनों में वृद्धि हुई। इन उपलब्धियों ने मानव जीवन की प्रत्याशा और भविष्य के प्रति विश्वास उत्पन्न करने का प्रयास किया है। फिर भी मानव अस्तित्व तथा प्राकृतिक संसाधनों के प्रति संकट उत्पन्न हो गया है। आज विश्व में प्रकृति कूपित एवं विक्षोभित है। जल, वायु, मृदा, समुद्र, वन, वन्यजीव और मानव जीवन सभी पर संकट मंडरा रहा है। पर्यावरण अशुद्ध हुआ है। जीवन मूल्यों में ह्रास हुआ है। आज विश्व में, युद्ध, आतंक, धर्म, जाति, भाषा, साधन–स्वामित्व, क्षेत्र एवं सीमाओं के नित नये झगड़े खड़े हैं। संकट की इस चुनौति को स्वीकारने एंव संविकास की संकल्पना करने का प्रयास जिस दर्शन ने किया है वह अस्तित्ववाद ही है।

अस्तित्ववाद, ज्ञान के प्रति बौद्धिकीकरण तथा मानवता की उपेक्षा के विरुद्ध एक प्रतिवाद है। यह अतिवैज्ञानिकता तथा अमूर्त भावों की सिद्धि, दोनों को अस्वीकार करता है साथ ही मानव की गरिमा को प्रतिष्ठित करता है। सामान्यतः अस्तित्व शब्द का प्रचलित अर्थ 'होना' होता है। लेकिन अस्तित्ववाद अपने मूल अर्थ में आविर्भाव, उद्‌गमन या उभरना, आदि भाव क्रियाओं को लेता है। जिससे गत्यात्मकता का बोध होता है। अस्तित्व का अर्थ है– ''अनुभूति के साथ विकसित होना''। इस अर्थ में केवल मानव ही अस्तित्ववान है। अस्तित्ववाद मानव की आन्तरिकता के विकास को संदर्भित करता है, जो अनुभूति के प्रथम स्फुरण से जीवन पर्यन्त निरन्तर रहता है। अस्तित्ववाद ने 'स्व' के प्रति चेतना का प्रयास किया है। सामाजिक सामूहिकता की भीड़ में व्यक्तित्व का विलोपन, मूल्यहीनता, जीवन का यांत्रिकरण, धार्मिक शोषण, सामाजिक बंधन एवं वर्जनाएं, राष्ट्रों में अलगाव, अराजकता, कला साहित्य तथा मानव जीवन में संवेदनाओं का

अपक्षय अस्तित्ववाद की विषयवस्तु है। यह वाद मानव की समस्त वर्तमान समस्याओं को पुनर्मूल्यांकित करता है तथा उनका समाधान खोजता है।

**अस्तित्ववाद का उद्‌भव**

विज्ञान और भौतिक संसाधनों की वृद्धि ने मानव को सुख संतोष देने का जितना दावा किया है व्यक्ति की मानसिक बेचैनी उतनी ही बढ़ी है। सभ्यता, संस्कृति, धर्म, कला, प्राकृतिक संसाधन तथा जीवन लब्धि सभी कुछ विघटन के कगार पर आ खड़ा हुआ है। संसाधनों एवं यंत्रों के बीच मानव ने मानव का अस्तित्व हड़प लिया है। ऐसे में अस्तित्ववाद पीढ़ियों से संचित ज्ञान और वर्तमान मानव की समस्याओं को पुनः विश्लेषित करता है। द्वितीय विश्व युद्ध की विभीषिका ने अस्तित्व संकट के विचार की भूमि बनाई। युद्ध के बाद जब यूरोप पीड़ा से करा रहा था। तब फ्रांस के कवियों, लेखकों एवं कलाकारों की भावप्रवणता ने अपनी प्रस्तुतियों से संकट की अनुभूति कराई। इमानुल काण्ट (1724–1854) और रेने देकार्ते के विचारों का पुनमंथन हुआ। ''मैं सोचता हूँ अतः मैं हूँ'' देकार्ते के इस कथन ने व्यक्ति की आत्मचेतना को जागृत किया। सोरेन किर्कगार्द (1813–1855) ने स्पष्ट रूप में एवं सत्य को आत्मपरक बनाया। उसने हीगल (1770–1831) के 'विश्व एक सुनियोजित चेतनात्मक सत्ता है' का खण्डन करते हुए कहा–''चिन्तन और वरण में मनुष्य स्वतंत्र है।'' किर्कगार्द के कथन– ''व्यक्ति की आन्तरिकता ही यथार्थ है'' को कार्ल यास्पर्स (1883–1969) ने और स्पष्ट किया– ''व्यक्ति को स्वयं की मौलिक स्वतंत्रता और अभीष्ट का वरण करने का विकल्प है''। मार्टिन हाइडेगर (1889–1976) मनुष्य को एक स्वतंत्र संभावना मानता है। उसके विचार में मानव जीवन का अर्थ है– ''मानव का होना''। मनुष्य के अस्तित्व का अर्थ है–''जगत तथा व्यक्तियों के सम्पर्क से उत्पन्न परिस्थितियों में मानव का होना''। गैब्रील मार्शल (1889–1978) ने प्रतिपादित किया कि मानव सत्ता पर शासन हावी होता जा रहा है, उसकी सृजनात्मकता नष्ट होती जा रही है, अति समाजीकरण से मानव यंत्र मात्र बनता जा रहा है। इस समस्या का समाधान विज्ञान को त्याग देने में ही निहित है। मार्शल आग्रह करता है–''अपने शरीर और अस्तित्व के खण्डित सम्बन्धों की ओर लौट चलो।'' फ्योदोर दोस्तोवस्की (1821–1881) का विचार है– ''मानव पीड़ा ही ज्ञान का एक मात्र साधन है।'' वह आस्था–अनास्था के द्वन्द्व को भी प्रस्तुत करता है। फ्रेडरिक नीत्शे (1844–1900) ''प्रभुत्व की इच्छा'' का समर्थक है– ''जीवन की सबसे उच्च तथा बलवती इच्छा साधारण ढंग से जीने में नहीं है बल्कि प्रभुत्व जमाने में है।'' उसने घोषणा की– धर्म और राष्ट्रीयता अफीम का नशा है। जो अधिक चालाक व्यक्तियों ने अपने दंमभ और अहं के तुष्टिकरण के लिए जन साधारण पर थोपे हैं जिससे वे दासत्व स्वीकार कर सकें। उसने जीवन शक्ति और सहज वृत्ति पर बल दिया। मौरिस ब्लांशों का मानव धार्मिक न होकर स्वाभाविक, प्राकृतिक और सामाजिक है। अलबर्ट कामू (1913–1960) ने विद्रोही का दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है–''या तो सब कुछ या कुछ नहीं''। वह प्रतिपादित करता है– "मैं व्रिदोह करता हूँ इसीलिए मेरा अस्तित्व है"।

जीन पॉल सार्त्र (1905–1960) ने आधुनिक विश्व की निराशापूर्ण स्थिति का मूलकारण 'यथास्थिति का मोह' को माना है। परिवर्तन का विरोध आत्म चेतना परक है। उसकी धारणा है कि मनुष्य अपनी संचेतना के माध्यम से अर्थहीन विश्व को अपने रहने योग्य बनाता है। उसका विचार है, ''अस्तित्व भाव से पहले (Existence Precedes Essence) है। उसके लिए ईश्वर भाव भी इस चेतना के बाद सृर्जित होता है।

हर्बर्ट मार्कूज (1898–1979) विज्ञान के इस युग में औद्योगिक समाज में उत्पन्न ''नवीन दासत्व'' पर चिंता व्यक्त करते हैं कि व्यक्ति एक वस्तु, एक साधन मात्र होता जा रहा है जो कम से कम उसके मानव होने पर आक्रमण ही है।

**अस्तित्ववाद की शैक्षिक प्रासंगिकता**

शिक्षा के सम्बन्ध में अस्तित्ववादियों की रूचि नहीं है। इनके विचार का केन्द्र 'मानव' है। शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया है। शिक्षा का प्रत्यय संस्था का प्रत्यय है। अस्तित्ववादी संस्थाओं का विरोध करते हैं एवं व्यक्ति की निजता, अभिव्यक्ति एवं स्वतंत्रता पर बल देते हैं। अस्तित्ववादी किसी सर्वमान्य सामाजिक शैक्षिक उद्‌देश्य की बातें नहीं करता अपितु शिक्षा द्वारा किसी छात्र को किस योग्य बनाया जाये यह कहने का अधिकार वह किसी को भी नहीं देता है। यह दर्शन मानता है कि यदि शिक्षक का लक्ष्य निर्धारित कर दिया जाये तो छात्र का स्वतंत्र अस्तित्व निश्चित रूपेन बाधित होगा।

एक अस्तित्ववादी की अपेक्षा है कि शिक्षा प्रणाली छात्रों के चतुर्दिक ऐसे वातावरण की रचना करे जिसमें बालक की स्वःचेतना विकसित हो। छात्र

का 'स्व' प्रत्यय विकसित हो फिर कलाएं स्वयं उससे उद्घाटित हो जायेंगी। 'स्व' प्रत्यय युक्त छात्र इसका उपयोग निर्णय लेने, योजना बनाने में करे। अस्तित्ववादी यह मानते हैं कि विद्यार्थी एक तथ्य है। उसकी निज सम्भाव्यता भी है। जिसका सम्बन्ध उससे है जो वह स्वयं बनेगी। अतः शिक्षक का दायित्व छात्र को सहायता देना है कि जो कुछ वह बनना चाहता है स्वयं के लिए बन जाये। विद्यार्थी को ऊपर से थोपी हुई सहायता नहीं बल्कि ऐसी सहायता चाहिए जो उसे सुरक्षित स्थिति तक जाने का पूरा मार्ग प्रशस्त करे ताकि वह वही चुनाव करें जो वह बनना चाहता है।

तथ्यता और सम्भाव्यता शिक्षक तथा विद्यार्थी दोनों में सदैव विद्यमान है। विद्यार्थी की भांति शिक्षक भी निर्माण प्रक्रिया में है। दोनों अभी कुछ है– ''तथ्य'' तथा कुछ होना चाहते हैं– ''सम्भाव्यता''। सार्त्त का कथन ''मनुष्य जो है, वही नहीं है तथा जो नहीं है, वह है।'' यह अतीत का अतिक्रमण एवं भविष्य की सम्भाव्यता को ही इंगित करता है।

अस्तित्ववाद मानव शिशु की आन्तरिकता के विकास की चुनौती देता है। क्रिर्कगार्ड के अनुसार, मानवीय सत्यों का अलग से, दूरी से दर्शन सत्य की अनुभूति नहीं है। मानव सत्यों के ज्ञान का अर्थ है इन्हें धारण तथा आत्मसात करना। अतः शिक्षा प्रक्रिया का गठन इस प्रकार नियोजित हो कि मानव शिशु मानवीय सत्यों को धारण कर सके। उन्होंने स्वयं कहा ''मैं सत्य को तब तक नहीं जान सकता जब तक वह मुझमें जीवन्त न हो जाये।'' मार्शल आधुनिक मानव की तात्विक श्रृंखला पर चिंतन करते हैं, आशा करते हैं कि शिक्षा विचार और जीवन के अलगाव को मिटाकर एकरस करें। विचार ही जीवन हो। अस्तित्ववादी ऐसी इच्छा व्यक्त करते हैं। कि शिक्षा बालक में चुनाव या निर्णय की क्षमता विकसित कर सकने का माध्यम बने। जिससे व्यक्ति में निहित अव्यक्त शक्तियों का व्यक्त होना घटित हो सके।

यास्पर्स की मान्यता है कि दर्शन का लक्ष्य है– एक ऐसी चेतना जागृत करना जिससे आधुनिक युग का मानव अपने जीवन एवं अस्तित्व के प्रति सचेत हो जाये। वर्तमान शिक्षा प्रणाली का लक्ष्य भी यही होना चाहिए कि वह जीवन के प्रति एक सचेत व्यक्ति का विकास करे। वह विवेक और आस्था पर भी बल देता है। यह सार्वभौमिक मानवीय मूल्य है। आध्यात्मिक ''आत्मा'' को निरूपित करते हुए यास्पर्स सृजनात्मकता और निर्माण में कला, साहित्य, दर्शन आदि के उच्च आदर्शों की प्राप्ति, तथा सामाजिक उत्थान के कार्यों पर बल देते हैं।

हाइडेगर, मूल सत् तक पहुँचने की बातें करता है। 'सत्' को देखने का झरोखा मनुष्य स्वयं है। तात्विक सत् की अनुभूति मानव स्वयं है। वही विचार अनुसांगिक अनुशासित है जो तत्वों में तात्विक सत् को देख सके। अतः शिक्षा में उनका यह विचार आत्मसात कर शिक्षकों को बालक के 'स्वः' के विकास के लिए तात्विक सत् के अनुभव का वातावरण बनाना चाहिए। सार्त्र आत्मचेतना की अनुभूति की विशुद्धता पर बल डालते हैं। मानव विकास में अन्य सत्ता के रूप में पर्यावरण भी सहायक हो सकता है। अतः पर्यावरणीय परिस्थितियों के प्रति पूर्ण सामंजस्य सिखाना भी शिक्षा का एक अनिवार्य अंग होना चाहिए। पर्यावरणीय तालमेल का जीवन आनंद का जीवन होगा।

**अस्तित्ववाही शिक्षा में मानव जीवन के उद्देश्य**

अस्तित्ववाद मुख्य रूप से तीन बातों पर अपना मत रखता है– आत्मानुभूति पर बल, वैयक्तिक स्वतंत्रता पर बल तथा मानवीय दौर्बल्यता को दूर करने पर बल। व्यक्ति में स्वानुभूति के अभाव और निर्णय लेने की अक्षमता के कारण इन बिन्दुओं की प्राप्ति असम्भव है। अतः शिक्षा प्रक्रिया नियोजन का सम्पूर्ण व्यक्ति को उत्तरदायित्वपूर्ण बनाने के लिए किया जाना चाहिए। मानव शिशु में आत्मानुशासन की प्रवृत्ति विकसित हो। समस्त प्रकार की कृतिमताओं से दूर रहते हुए व्यक्ति एक 'समग्र मानव' के रूप में विकसित हो सके। ऐसी धारणा अस्तित्ववादी दार्शनिक करते हैं।

हर्बर्ट मारकूज 'मुक्त सभ्यता' का स्वप्न देखता है। ऐसा समाज जहां दमन नहीं होगा। ऐसी दुनिया जहां व्यक्ति अपने नियम स्वयं बनायेगा और अन्य व्यक्तियों से भेदभाव नहीं करेगा। वह कहता है कि ''शोषण के स्रोतों से पदार्थमूलक तार्किकता का मुखौटा उतार फेंको, गुलामी त्याग दो और क्रान्तिकारी प्रवृत्तियां विकसित करो।'' जिससे नव–सामाजिक व्यवस्था विकसित हो। ''व्यक्ति साधन नहीं है, वस्तु नहीं है, वह मानव है और उसे मानव के रूप में विकसित होना है। वह कहता है कि ''मैं विश्वविद्यालयों में हिंसा के विरूद्ध हूँ लेकिन विद्यार्थियों के पक्ष में हूँ क्योंकि वे वर्तमान व्यवस्था की विवेकहीनता का विरोध करते हैं।''

ऐरिक फ्रौम (1900–1980) मानवीय प्रकृति की मूलभूत अच्छाईयों में विश्वास करता है किन्तु आज की सामाजिक व्यवस्था उसे कुचल देती है। फ्रॉम ऐसे व्यक्ति का विकास चाहते हैं जो, ''सृजन के काम में लगा रहता है और अपने और समाज के बीच कोई भेदभाव नहीं पाता।'' हेलेन वाश्नॉक (1930–2019) आधुनिकीकरण एवं औद्योगिकीकरण के प्रति क्षोभ को प्रकट करती हैं और इसमें व्यक्ति की परतन्त्रता और असमर्थता को पाती है। उसके अनुसार, व्यक्ति में श्रृद्धा, आदर और उत्तरदायित्व की भावना का विकास करना ही शिक्षा का उददेश्य है।। जिससे एक अच्छा समाज बन सके।

**अस्तित्ववादः**

**निष्कर्ष एवं उपादेयता**

द्वितीय विश्वयुद्ध की विभीषिका के प्रत्युत्तर में कला, संगीत, रंगमंच, साहित्य और सिनेमा ने मानव के अस्तित्व की वास्तविक चिंताओं को अपनी अजेय कृतियों के माध्यम से विश्व पटल पर रखा। मानव जीवन की क्षणभंगुरता, अस्थिपरता, दबाव, तनाव और उलझा तानाबाना दर्शन और मनोविज्ञान के परम्परागत ढंग से अलग एक नए दृष्टिकोण से समझा–समझाया गया परिजामतः अस्तित्ववाद का उदय हुआ। इस विचारधारा में मानव की स्वतंत्रता और उसके 'स्व' का विकास ही केन्द्रीय बिन्दू है। स्वानुशासन, विवेक तथा भयमुक्त समाज की स्थापना इन विचारकों का स्वपन है। कृत्रिमता, दबाव और परम्पराओं के स्थान पर मानव की मूलभूत अच्छाई, सृजन और स्व विवेकी समाज की स्थापना अस्तित्ववाद का अंतिम लक्ष्य है।

**संदर्भः**


1. ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी (2014) : आक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रैस, पुनःसंस्करण, 22 अगस्त 2014
2. क्रोबेल, स्टीवन (2010) : एक्सटेन्शियलिज्म, स्टेनफोर्ड एनसाइकलोपीडिया ऑफ फिलोसोफी, स्टेनफोर्ड यूनी0 प्रेस, न्यूयॉर्क
3. फिलिन, थॉमस (2006) : अस्तित्ववाद–एक अति लघु परिचय, ऑक्साफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रैस, न्यूयॉर्क
4. मैक्डाल्ड, मिलियम (2009) : सॉरेन क्रिकगार्ड, एक परिचय, स्टेनफोर्ट एनसाइकलोपीडिया ऑफ फिलोसोफी, स्टेनफोर्ड, न्यूयार्क.
5. लाल, बसन्त कुमार (2005) :समकालीन पाश्चात्य दर्शन, रामनाथ केदारनाथ पब्लिकेशन, मेरठ
6. रॉय मुक्तिबसु (2000) : आधुनिक पाश्चात्य दर्शन, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल,
7. श्रीवास्तव, जगदीश सहाय (1999) समकालीन दर्शन का वैज्ञानिक इतिहास, अभिव्यक्ति प्रकाशन, इलाहाबाद.
8. सैनी, रामेश्वर लाल एवं गुप्ता मिथिलेश (1991) समकालीन समाजशास्त्रीय सिद्धान्त, रावत पब्लिकेशन, जयपुर.
9. गुप्त, ईश्वर दयाल (1991): आधुनिक भारतीय शिक्षा : समस्या–चिन्तन, हरियाणा साहित्य अकादमी, चण्डीगढ़
10. जाटव डी0आर0 (2003) पाश्चात्य दर्शन का समीक्षात्मक विश्लेषण : मलिक एण्ड कम्पनी, जयपुर, निगम, शोभा (2003) : पाश्चात्य दर्शन के सम्प्रदाय : मोती लाल बनारसी दास, दरियागंज, दिल्ली
11. पाण्डेय रामशकल (2006) शिक्षा के दार्शनिक आधार, हिमालय पॉकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।
12. मसीह, याकूब : (1996) पाश्चात्य दर्शन का समीक्षात्मक इतिहास, मोती लाल बनारसी दास, दिल्ली.
13. मिश्र, ह्रदय नारायण (2012) : पाश्चात्य दर्शन की समस्याएँ, शेखर प्रकाशन इलाहाबाद,
14. सार्त्र, जे0पी0 (1946) : एक्सटेन्शियलिज्म इज ए हयूमेनिज्म, मॉर्क्सिस्ट ऑरज, पुनर्मुद्रण 2010.
15. कामू अलबर्ट (1945) : लिरिकल एण्ड क्रिटिकल एस्से, एडीटिट बाय फिलिप टोड़ी, लेस नोविलिस, न्यूयॉर्क
16. दोस्तोवस्की, फियोडर (पुनर्मुद्रण 2014) : रूपा पब्लिकेशन, नई दिल्ली
17. फलिन, आर0टी0 (2006) : ऐ वेरी सोर्ट इंट्रोडक्शन ऑफ एक्सेन्टिलिका, ऑक्सफोर्ड यूनी0 प्रैस, न्यूयॉर्क
18. डेगल, क्रिस्टीन (2006) : अस्तित्ववादी विचारक एवं सिद्धान्त मैकगिल क्वीन प्रैस, पृष्ठ सं0 05
19. ऐरोसन, रोनॉल्ड (2004) : कामू और सार्त्र, यूनीवर्सिटी ऑफ शिकांगो प्रैस, अध्याय–3 शिकांगो
20. सिंह, अमृतजीत (1995) : रॉल्फ एलीसन से वार्तालाप, यूनीवर्सिटी ऑफ मिसीसिप्पी प्रैस पुनर्मुदण 26 मार्च 2015.
21. माकर्यूस, हर्बट (1972) : सार्त्र का अस्तित्ववाद, स्टडीज इन क्रिटिकल फिलोसॉफी, भाषान्तरण जोरिस डी0 ब्रैस, लन्दन, एन0एल0वी0 पृष्ठ 161
22. हेडेगर, मार्टिन (1978) : मानववाद पर मंथन, नौ मुख्य निबंध तथा अस्तित्व व समय का परिचय, लन्दन, रॉटलेज.
23. शाही, योगेन्द्र (1996) : अस्तित्ववाद– किकगार्द से कामूतक, मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी.
24. फ्रैडरिक, नीत्शे (1996) : बियांड गॉड एण्ड एविल, जनरल प्रैस दरियागंज, नई दिल्ली पुर्नमुद्रण प्रथम संस्करण 2019.